प्रथम अध्याय

विषय परिचय ।

प्रथम अध्याय

विषय परिचय

भारत वर्ष में हिन्दी भाषा का प्रयोग अधिक मात्रा में किया जाता है। दक्षिण भारत की तुलना में उत्तर भारत में हिन्दी का प्रचार, प्रसार एवं प्रयोग अधिक है। क्यों कि उत्तर भारत में अधिकत्तर लोगों की मातृभाषा ही हिन्दी है।

जिनकी मातृभाषा हिन्दी नहीं है, ऐसे छात्रों के लिए हिन्दीतर भाषी प्रांतों में पाँचवीं कक्षा से द्वितीय भाषा के रूप में हिन्दी अध्यापन का प्रारंभ होता है। अहिंदी भाषा क्षेत्र में पाठ्यचर्या के आधार पर कक्षा पाँचवीं से लेकर बारहवीं तक के पाठ्यक्रम का निर्धारण किया जाता है। निर्धारित पाठ्यक्रम के आधार पर उद्देश्यों की पूर्ति हेतु पाठ्यपुस्तकों का निर्माण किया जाता है।

महाराष्ट्र में पाठ्यपुस्तक निर्मिति मंडल द्वारा पाठ्यपुस्तकों की निर्मिति होती है। मूलत: पूर्व माध्यमिक स्थर तक के हिन्दी अध्यापन का उद्देश्य छात्र को विविध भाषिक कौशलों से अवगत कराना माना गया है। लेकिन सवाल यह उठता है कि भाषिक कौशलों को अवगत करने का माध्यम क्या है ? क्या वास्तव में इन कौशलों को अवगत किया जाता है ? जिन की मातृभाषा हिन्दी नहीं है ऐसे छात्रों की दृष्टि से इन सभी उद्देश्यों की दृष्टिसे सातवीं कक्षा उत्तीर्ण छात्र हिन्दी में अच्छी तरह वाचन कर सकें, लेखन कर सकें तथा अपने विचार हिन्दी में सरलता से अभिव्यक्त कर सकें। और इसका प्रमुख माध्यम है पाठ्यपुस्तकें लेकिन व्यवहार में तो आम तौर पर पाया जाता है कि बारहवीं उत्तीर्ण या स्नातक उपाधि प्राप्त करने वाला छात्र भी मौखिक या लिखित रूप में अपने विचारों की अभिव्यक्ति सहजता से नहीं कर पाता है।

अत: सवाल यह उपस्थित होता है, कि यह सब किस कारण होता है ? या तो पाठ्यपुस्तकों का निर्माण मार्गिक उद्देश्यों के अनुसार नहीं हुआ है या उद्देश्यानुरूप बनी हुयी पाठ्यपुस्तकों का अध्यापन मार्गिक उद्देश्यों के अनुसार नहीं होता है । अथवा यह अनुमान भी हो सकता है कि छात्रों में यह कौशल समझने की बौद्धिक क्षमता नहीं है । अत: स्पष्ट है कि इसका असली कारण ढूँढने के लिए इन पाठ्यपुस्तकों को लेकर कृति-संशोधन होना अनिवार्य है ।

छात्र पूर्व माध्यमिक स्थर पर मार्गिक कौशलों से अवगत हो जाय इस लिए पाठ्यक्रम एवं पाठ्यपुस्तक का निर्माण किया जाता है । श्रवण,आकलन,भाषण, लेखन इन कौशलों की पूर्ति पाँचवीं से लेकर सातवीं तक के पाठ्यपुस्तकों के माध्यम से होती है या नहीं ? यह देखने के लिए संशोधन की नितांत आवश्यकता है । इस आवश्यकता की पूर्ति हेतु ही प्रस्तुत संशोधन करने का प्रयास किया गया है । इसमें केवल महाराष्ट्र पाठ्यपुस्तक निर्मिति मंडल द्वारा प्रकाशित पाँचवीं,छठी और सातवीं इन पूर्व माध्यमिक तीन कक्षाओं की पाठ्यपुस्तकों का ही भाषा की दृष्टि से अनुशीलन किया गया है ।

(अ) पाठ्यचर्या -

स्वरूप और परिभाषा -

शिक्षा के अंतर्गत तीन प्रक्रियाएँ महत्वपूर्ण होती है। पहली प्रक्रिया शिक्षा के लक्ष्य और उद्देश्य निश्चित करना, दूसरी प्रक्रिया लक्ष्य और उद्देश्य के अनुसार पाठ्यचर्या तैयार करना और तीसरी प्रक्रिया दोनों के अनुरूप अध्यापन पद्धति का उपयोग करके छात्रों को पढ़ाना।

शैक्षणिक लक्ष्य और उद्देश्यों की पूर्ति का साधन पाठ्यचर्या है। शिक्षा के अमूर्त लक्ष्य पाठ्यचर्या के माध्यम से मूर्त रूप धारण करते हैं। इस लिए शिक्षा का लक्ष्य और उद्देश्यों की पूर्ति पाठ्यचर्या पर निर्भर है।

पाठ्यचर्या के लिए अंग्रेजी में ' Curriculum ' शब्द प्रयुक्त किया जाता है। यह मूल लॅटिन शब्द है। लॅटिन में इसका अर्थ है - ' race-course ' अर्थात प्रतियोगिता का मैदान। पाठ्यचर्या एक प्रतियोगिता है। विषयों के पथ पर ज्ञान प्राप्ति तथा विकास के उद्देश्यों तक दौड़ते जाना, छात्र का प्रमुख कर्तव्य है।

आम तौर पर जिसमें निश्चित विषय, कुछ चुने हुए विषयांश और इन्हें क्रम के अनुसार अंकित किया हो, उसे पाठ्यचर्या कहते हैं। किन्तु आधुनिक शिक्षा शास्त्रियों के मतानुसार पाठ्यचर्या का सही अर्थ उन्होंने दी परिभाषाओं से स्पष्ट होता है। साथ ही साथ पाठ्यचर्या की व्याप्ति भी स्पष्ट होती है।

पाठ्यचर्या की परिभाषा --

(1) Manroe - Curriculum embodies all the experiences which are utilized by the school to attain the aims of education."[1]

मनरो के मतानुसार शैक्षणिक लक्ष्य की पूर्ति के लिए पाठशाला में उपयोग में लाए गए सभी अनुभवों का समावेश पाठ्यचर्या में होता है।

(2) Remmers - " The Curriculum is now being defined as all the experiences of the learner that are under the control of the school."[2]

रेमर्स के मतानुसार पाठशाला के नियंत्रण में पढने वाले को प्राप्त सभी अनुभवों की सामग्री को पाठयचर्या कहा जाता है।

(3) Walter - " The Curriculum may be defined as the experiences that pupils have while under the direction of the school, it includes both class-room activities work as well as play. All such activities should promote the needs and welfare of the individual and the society."[3]

वाल्टर के मतानुसार छात्रों की निजी एवं सामाजिक जरूरतों और कल्याण हेतु पाठशाला के माध्यम से प्राप्त होने वाले अनुभवों का, कक्षा में होने वाली कृतियों का, कार्यों का और खेल का समावेश पाठ्चर्या में होता है।

(4) Caswell - " the curriculum is all that goes on in the lives of the childern then parents and teachers. The curriculum is made up of all that surrounds the learner in all his working hours. In fact the curriculum has been described as the environment in motion."[4]

कॅसवेल के मतानुसार छात्रों के जीवन में छात्रों से संबंधित अध्यापक और पालकों के जीवन में जो - जो घटित होता है उसे पाठ्यचर्या कहते है। वस्तुत: गतिशील और क्रियाशील वातावरण जो शालेय काल में छात्रों को व्याप्त करता है, वही पाठ्यचर्या है।

अत: स्पष्ट है कि पाठ्शाला में प्राप्त सभी अनुभवों का समावेश पाठ्यचर्या में होता है। जिससे छात्रों के व्यक्तित्व का विकास होता है। उसमें केवल किताबी

ज्ञान ही नहीं होता ।

सारांश रूप में पाठ्यचर्या में आज छात्रों पर संस्कार करने वाले सभी अनुभवों का, कृति का समावेश होता है जैसे विषय व उसका ज्ञान, विषय ज्ञान के अतिरिक्त अन्य अध्ययनपूरक कार्यक्रमोंसे, अध्यापक-छात्र, छात्र-छात्र, संबंधों में से प्राप्त अनुभव, उससे वर्तन में आनेवाला परिवर्तन, कक्षा में और कक्षा के बाहर जो प्राप्त होता है, चाहे वह परीक्षा से संबंधित हो या न हो ।

अत: छात्र के सामूहिक विकास के लिए, उसकी निजी एवं सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए शालेय जीवन में प्राप्त होनेवाले सभी प्रकार के अनुभवों को पाठ्यचर्या कहते हैं ।

पाठ्यचर्या निर्मिती के तत्व --

प्राचीन काल से आज तक पाठ्यचर्या के संबंध में दृष्टिकोण परिवर्तित होता आया है । आदर्श पाठ्यचर्या कैसी हो इसका विवेचन करते समय एक मुद्दा महत्वपूर्ण है कि पाठ्यचर्या समन्वयवादी हो । पाठ्यचर्या निर्मिति करते समय निम्नलिखित तत्व महत्वपूर्ण हैं ।

१) आज की पाठ्यचर्या किताबी और ज्ञाननिष्ठ है । पाठ्यचर्या शिक्षा विषयक लक्ष्य की पूर्ति का साधन है । पाठ्यचर्या के माध्यम से छात्रों का वैचारिक, भावनात्मक, नैतिक, सामाजिक, व्यावसायके बौधिक विकास होना चाहिए ।

२) पाठ्यचर्या सिर्फ विषयनिष्ठ न हो, उस में विषय बाह्य अनुभवों का समावेश होना चाहिए ।

३) पाठ्यचर्या में केवल किताबी ज्ञान न होकर उस में प्रत्यक्ष कृति और व्यवसाय का समावेश होना चाहिए ।

४) पाठ्यचर्या में एक विषय का अन्य विषयों से संबंध और समवाय की आवश्यकता है ।

५) पाठ्यचर्या में विषयों की भरमार और अनावश्यक जानकारी न हो । उस में मूलभूत ज्ञान हो ।

६) पाठ्यचर्या जीवन से संबंधित हो ।

७) पाठ्यचर्या में मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति होनी चाहिए ।

८) पाठ्यचर्या में व्यवसाय,कला,प्रकल्प आदि अध्ययन पूरक कार्यक्रम होने चाहिए ।

९) छात्रों की विकासावस्था को मद्देनजर रखते हुए पाठ्यचर्या की निर्मिति होनी चाहिए ।

१०) पाठ्यचर्या में वैकल्पिक विषयों की व्यवस्था हो ।

११) पाठ्यचर्या परिवर्तनशील,गतिशील हो ।

१२) पाठ्यचर्या को तत्वज्ञान का अधिष्ठान हो ।

नन् के मतानुसार "भारत की परंपरा आध्यात्मवादी है,आदर्शवादी है । तो शैक्षणिक लक्ष्य और उद्देश्य आध्यात्मवादी व आदर्शवादी अधिष्ठान पर विराजित होनी चाहिए ।" [५]

काल के अनुसार निसर्गवाद,कार्यवाद,यथार्थवाद,मनोवैज्ञानिक और समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से उपयुक्त और स्वीकृत बातों का स्वीकार पाठ्यचर्या में होना चाहिए ।

(आ) पाठ्यक्रम -

हिन्दी पाठ्यक्रम का स्वरूप और परिभाषा -

शिक्षा के पाठ्यक्रम की कल्पना देश, काल और समाज के अनुसार होनी चाहिए। जैसा देश होता है और जैसी उसकी आवश्यकताएँ होती है, उसी के अनुरूप पाठ्यक्रम बनता है। काल के अनुसार पाठ्यक्रम में परिवर्तन होते हैं। समाज की दृष्टि से भी पाठ्यक्रम प्रभावित होता है।

पाठ्यक्रम की रूपरेखा का आधार तो प्रमुख रूप से बालक होता है। क्यों कि शिक्षा बालक के लिए है। अत: बालक को ध्यान में रखकर पाठ्यक्रम प्रस्तुत करना उचित है। दूसरे शब्दों में पाठ्यक्रम की उपयोगिता पर ध्यान दिया जाता है। अत: कोई भी पाठ्यक्रम हो, उस में दो बातों का होना आवश्यक है, एक तो वह बालक के व्यक्तित्व के पूर्ण विकास में सहायक हो और दूसरे उसकी सामाजिक उपयोगिता। पाठ्यक्रम के चयन के लिए रेमन्ट ने चार बातों को आवश्यक माना है[६]।

१) मनुष्य - जाति का कल्याण जिस ज्ञान से हो उसे पाठ्यक्रम में स्थान मिलना चाहिए।
२) बालक की शिक्षा की अवधि को ध्यान में रखकर पाठ्यक्रम बनाया जाय।
३) बालक की रुचि और आवश्यकता के नुसार उद्योग-धन्धो की शिक्षा दी जाय।
४) पाठ्यक्रम बालक की योग्यता और रुचि के अनुसार होना चाहिए।

शिक्षालयों में जो विभिन्न विषय पढाये जाते हैं, उनके अपने खास उद्देश्य होते हैं। उन उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए शिक्षालयों में कुछ खास प्रबंध किया जाता है। इस प्रबंध के जो मुख्य पहलू हैं, उन में पाठ्यक्रम, पाठ्यपुस्तकें, और अध्यापन इन तीनों का अधिक महत्त्व है।

पाठ्यक्रम शिक्षण-व्यवस्था का आवश्यक अंग है। सभी विषयों के

अध्यापकों को एक निश्चित समय में अपनी कक्षा के पाठ्यक्रम को समाप्त करना होता है। इसी पाठ्यक्रम के अनुसार वे समूचे शिक्षण-कार्य को आयोजित करते हैं। इसी पाठ्यक्रम के आधार पर प्रश्नपत्र बनाये जाते हैं और विद्यार्थियों की योग्यता का परीक्षण किया जाता है।

• पाठ्यक्रम वह विषय सामग्री है, जिसे एक कक्षा के विद्यार्थियों को एक निश्चित समय में पढना होता है।• [७] इस विषय-सामग्री का कुछ भाग पाठ्य-पुस्तक के माध्यम से प्रस्तुत किया जाता है और कुछ के निर्देशक संकेत अध्यापकों को दिये जाते हैं। अध्यापक इन निर्देशक-संकेतों के आधार पर आवश्यक सामग्री जुटाते हैं।

• पाठ्यक्रम सांकेतिक विषय-सामग्री का वह ब्योरा है, जिस के अनुसार अध्यापक को निर्धारित-समय में अपना शिक्षण कार्य समाप्त करना होता है।• निर्धारित समय में अध्यापक उस विषय - सामग्री के आधार पर वांछित ज्ञान प्रदान करता है और विद्यार्थी वांछित योग्यता प्राप्त करते हैं। फिर इसी पाठय-क्रम के आधार पर परीक्षा के माध्यम से विद्यार्थियों की योग्यता की जाँच की जाती है।

पाठ्यक्रम के मूल तत्व --

प्रत्येक विषय की पढाई का आकलन छात्र की आयु और बौद्धिक विकास पर निर्भर होगा, इसलिए पाठ्यक्रम निश्चित करते समय मनोविज्ञान और शिक्षा - शास्त्र के संबंधित सिद्धातों को विचार में लेना होगा। इस के अनुसार पाठ्यक्रम के मूल तत्वों को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है।

अ - गुणात्मक दृष्टिकोण।

आ - संख्यात्मक दृष्टिकोण।

अ - गुणात्मक दृष्टिकोण -

शिक्षा के उद्देश्यों के अंतर्गत मुख्य उद्देश्य यह है कि आत्माविष्कार करने की योग्यता छात्रों में आ जाए क्यों कि आत्माविष्कार द्वारा ही व्यक्ति -

विकास संभव है। इस लिए स्पष्ट है कि पाठ्यक्रम में ऐसे ही विषयों का अंतर्भाव हो, जिन से छात्रों को आत्माविष्कार के और बुद्धि-विकास तथा भावना विकास के अधिकाधिक अवसर प्राप्त हो। आज का छात्र समाज का एक भावी घटक है। समाज के घटक के रूप में सामाजिक जिम्मेदारियों और कर्तव्यों को पूरा-पूरा और सही-सही निभाने की दृष्टि से आवश्यक ज्ञान और योग्यता छात्रों को प्राप्त हो इसी रूप में पाठ्यक्रम की रचना की जानी चाहिए। पाठ्यक्रम भावी जीवन के निकट और सर्वांगीण विकास में सहायक हो। पाठ्यक्रम निर्धारित करते समय छात्र के भावी जीवन में उपयोगी ज्ञान आवश्यक है। पाठ्यक्रम का महत्व शाब्दिक ज्ञान की अपेक्षा प्राप्त ज्ञान के उपयोग की दृष्टि से अधिक है।

आ - संख्यात्मक दृष्टिकोण -

गुणात्मक दृष्टिकोण में जो अपेक्षाएँ कही गयी हैं, उनकी पूर्ति के लिए पाठ्यक्रम में संख्यात्मक दृष्टिकोण का होना भी जरूरी है। कक्षा में हर विषय के लिए निश्चित समय और नियुक्त पाठ्यपुस्तकों का अधिकाधिक उपयोग करने की संभावना, इन दोनों में सामंजस्य प्रस्थापित करने की दृष्टि से पाठयक्रम के संख्यात्मक दृष्टिकोण का बहुत महत्व होता है। गुणात्मक दृष्टिकोण के अनुसार पाठ्यक्रम के जो साध्य बतलाये गये हैं, उन को सिद्ध करने की दृष्टि से पाठ्यक्रम के संख्यात्मक रूप से पाठ्यक्रम की योजना करना जरूरी बन जाता है। साल भर की अवधि में गद्य, पद्य, व्याकरण लेखन आदि विभिन्न अंगों का कितना भाग पूरा कर लिया जाए, नियोजित भाग का अध्ययन संतोष जनक रीति से किस प्रकार पूर्ण हो, प्रत्येक कक्षा में भिन्न-भिन्न विषयों के अध्ययन के लिए कितना समय निश्चित किया जाय आदि बातों का अंतर्भाव संख्यात्मक दृष्टिकोण से पाठ्यक्रम में किया जाना चाहिए।

पाठयक्रम के मूलभूत सिद्धांत —

शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर माध्यमिक-शिक्षा का पाठ्यक्रम तैयार करते समय निम्नलिखित सिद्धांतों की ओर ध्यान देना आवश्यक है।

१. पाठ्यक्रम उद्देश्यों पर आधारित होना चाहिए --

विभिन्न शिक्षा स्तरों पर भाषा-शिक्षा के अलग-अलग उद्देश्य निर्धारित किये जाते हैं। पाठ्यक्रम इन्हीं उद्देश्यों का प्रतिबिंब होना चाहिए। पाठ्यक्रम से निर्धारित उद्देश्यों की प्राप्ति संभव होनी चाहिए। पाठ्य-क्रम शिक्षा के उद्देश्यों की पूर्ति का सशक्त साधन है।

२. पाठ्यक्रम विद्यार्थियों की मानसिक आवश्यकताओं के अनुरूप होना चाहिए -

भाषा द्वारा विद्यार्थियों को अपने विचार व्यक्त करने तथा दूसरों के विचार ग्रहण करने के योग्य बनाया जाता है। मातृभाषा के रूप में हिन्दी पढने वाले विद्यार्थियों के लिए अन्य विषयों का शिक्षा-माध्यम भी यही होता है। जब कि अहिंदी भाषी छात्र दूसरी भाषा या संपर्क भाषा के रूप में हिन्दी पढते हैं। इसलिए हिन्दी शिक्षा का स्तर भी अलग होगा। पाठ्यक्रम तैयार करते समय विद्यार्थियों की मानसिक आवश्यकताओं की ओर ध्यान देना भी जरूरी है।

३. पाठ्यक्रम विद्यार्थियों की मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं के अनुसार होना चाहिए --

पाठ्य-क्रम का प्रयोग विद्यार्थियों के लिए किया जाता है। किस आयु - वर्ग के लिए किस प्रकार का पाठ्य-क्रम उपयोगी होगा ? पाठ्य-क्रम को तैयार करते समय इस प्रश्न को हमेशा सम्मुख रखना चाहिए। आयु-वर्ग के अतिरिक्त विद्यार्थियों की मानसिक, बौद्धिक तथा अन्य योग्यताओं को भी पाठ्यक्रम का आधार बनाना चाहिए।

४. पाठ्यक्रम में भाषा-शिक्षा के सभी पहलुओं का संतुलन होना चाहिए --

भाषा शिक्षा में सुनने, बोलने, पढने तथा लिखने का महत्वपूर्ण स्थान है। इस में विद्यार्थियों को उच्चारण, वाचन, शुद्ध लेखन तथा रचना कार्य की शिक्षा दी जाती है। इन सभी तत्वों का पाठ्यक्रम में उचित स्थान होना चाहिए।

५. पाठ्यक्रम निर्धारित समय के अनुकूल होना चाहिए —

पाठ्यक्रम को निर्धारित समय में समाप्त करना होता है। उस के लिए स्कूल टाईम-टेबल में साप्ताहिक पीरियड निश्चित किये जाते हैं। पाठ्यक्रम बनाते समय निर्धारित समय पर ध्यान देना आवश्यक है। और निर्धारित समय के अनुसार पाठ्यक्रम न बहुत भारी होना चाहिए न ही बहुत हल्का होना चाहिए।

६. पाठ्यक्रम न अधिक कठिन होना चाहिए और न ही अधिक सरल होना चाहिए —

प्रत्येक कक्षा में विभिन्न बौद्धिक स्तर के विद्यार्थी होते हैं। यदि पाठ्यक्रम कठिन होगा तो विद्यार्थी उस के प्रति रुचि नहीं दिखायेंगे, बल्कि उससे दूर भागने की कोशिश करेंगे। अगर पाठ्यक्रम अत्यंत सरल होगा तो तीव्र बुद्धि वाले विद्यार्थी उस में विशेष रुचि नहीं दिखायेंगे। इस लिए पाठ्यक्रम न अधिक कठिन हो और न अधिक सरल हो।

७. पाठ्यक्रम में जीवन के विभिन्न पहलू प्रतिबिंबित होने चाहिए —

पाठ्यक्रम किसी काल्पनिक लोक से नहीं बल्कि वास्तविक जीवन से संबंधित होना चाहिए। निर्धारित पाठ्यक्रम को लड़के, लड़कियाँ, शहरी, ग्रामीण, धनी, निर्धन, आदि विभिन्न प्रकार के विद्यार्थी पढ़ते हैं। उन सब की जीवन-झाँकी पाठ्यक्रम में मिलनी चाहिए।

८. पाठ्यक्रम में भावी जीवन की आशाएँ एवं आकांक्षाएँ समाहित होनी चाहिए —

शिक्षा द्वारा विद्यार्थियों में कुछ व्यावहारिक, सामाजिक एवं नैतिक परिवर्तन लाने की कोशिश की जाती है। पाठ्यक्रम द्वारा विद्यार्थियों को लोकतंत्रीय विचार-धारा का ज्ञान होना चाहिए और उस के प्रति उनका विश्वास दृढ होना चाहिए।

९. पाठ्यक्रम कठोर नहीं होना चाहिए —

पाठ्यक्रम में लचीलापन होना चाहिए। उस में परिवर्तन और परिवर्धन की पर्याप्त गुंजाइश होनी चाहिए। जीवन परिवर्तनशील है, उसके अनुरूप शिक्षा - पद्धति तथा शिक्षा के उद्देश्यों में भी परिवर्तन होते रहते है। उन्हीं के अनुकूल पाठ्यक्रम में भी परिवर्तन होना चाहिए।

१० पाठ्यक्रम का निर्माण करते समय विकास क्रम को भी सम्मुख रखना चाहिए -

पहली श्रेणियाँ बच्चे के विकास क्रम की पहली सीढी है। उस के पश्चात सभी श्रेणियाँ उस के विकासक्रम की ओर संकेत करती है। किसी भी कक्षा के लिए भाषा का पाठ्यक्रम बनाते समय पिछली श्रेणी के पाठ्यक्रम को सम्मुख रखना चाहिए ताकि स्वाभाविक क्रमिक विकास बना रहे। इस प्रकार विभिन्न श्रेणियों के पाठ्यक्रम में वांछित अंतर बना रहेगा और विद्यार्थियों का विकास स्वाभाविक क्रम से चलता रहेगा।

११ पाठ्यक्रम छोटी-छोटी इकाईयों में बँटा होना चाहिए -

छोटी इकाईयों से पाठ्यक्रम सुबोध, स्पष्ट एवं सुग्राह्य बन जाता है। प्रत्येक इकाई का संबंध किसी न किसी उद्देश्य के साथ होना चाहिए। किस इकाई से कौनसे उद्देश्य की प्राप्ति संभव है, इस का स्पष्ट उल्लेख होना चाहिए। अध्यापकों को किसी प्रकार का भ्रम नहीं होता है और वे आसानी से पाठ्यक्रम का अनुसरण करते हुए कुशलतापूर्वक शिक्षण कार्य कर सकते हैं।

१२ पाठ्यक्रम में अध्यापकों की सुविधा के आवश्यक निर्देशों तथा सूचनाओं का भी उल्लेख होना चाहिए —

पाठ्यक्रम के अनुसार शिक्षकों को अपना शिक्षण-कार्य आयोजित करना होता है। इस लिए पाठ्यक्रम में अध्यापकों के लिए आवश्यक निर्देश एवं सूचनाएँ होनी चाहिए। जैसे पाठ्यक्रम की प्रत्येक इकाई द्वारा प्राप्त उद्देश्य, विषय-वस्तु

में यत्र-तत्र उन में पौराणिक एवं ऐतिहासिक संदर्भ, पढाने के लिए विभिन्न शिक्षण विधियाँ, पढाने के लिए सहायक सामग्री, शिक्षण कार्य के दौरान आने वाली कठिनाइयाँ एवं समस्याएँ तथा उनका समाधान, विषय-सामग्री पर क्रियाएँ आदि ।

पाठ्यचर्या व पाठ्यक्रम का सम्बंध --

आम तौर पर लोग पाठ्यचर्या और पाठ्यक्रम को समझने में हमेशा गलती करते हैं । पाठ्यक्रम की तुलना में पाठ्यचर्या व्यापक होती है । पाठ्यचर्या की रचना करते समय निम्न दो उद्देश्यों पर ध्यान देना आवश्यक है ।

अ) उद्देश्यों से अभिप्रेत वर्तन परिवर्तन के संबंध में कौन-कौन से अनुभव योग्य है, उसे मद्दे नजर रखते हुए विषयों का और उपक्रमों का चुनाव किया जाता है ।

आ) चुने हुए प्रत्येक विषय का आशय उसका स्तर उस में अंतर्भूत विविध क्षमता, अनुभवों के क्रमश: अंकन को पाठ्यक्रम कहा जाता है । प्रत्येक विषय का कक्षा के अनुसार पाठ्यक्रम होता है । पाठ्यक्रम विषय के नीचे दिये हुए मद्दे और उपमद्दों का नाम है । कुछ निश्चित पाठ्यक्रमों का सामूहिक रूप पाठ्यचर्या है ।

पाठ्यचर्या में पाठ्यक्रम और आकृतिबंध दोनों का समावेश होता है । शिक्षा के उद्देश्य साध्य करने के लिए आयोजित सभी संस्कारक्षम उपक्रमों का समावेश पाठ्यक्रम में होता है । इस से पाठ्यचर्या की व्यापकता सिद्ध होती है । पाठ्यक्रम के अनुसार प्रत्येक विषय की पुस्तक लिखि जाती है । शिक्षण के उद्देश्यों की पूर्ति के लिए पाठ्यक्रम तैयार किया जाता है । पाठ्यक्रम का निर्माण करते समय पहले पाठ्यक्रम के उद्देश्य लिखे जाते हैं और तत्पश्चात पाठ्यक्रम का निर्माण किया जाता है ।

(इ) पाठ्य पुस्तक -

पाठ्यपुस्तक की महत्ता एवं आवश्यकता --

भाषा शिक्षा के जो उद्देश्य हैं,उन्हें साध्य करने के लिए चार प्रमुख साधन हैं। पाठ्यक्रम,पाठ्यपुस्तक,अध्यापक और उसकी निर्धारित विविध प्रणालियाँ इन में से पाठ्यपुस्तक का बहुत महत्व है। क्यों कि विविध विषयों का ज्ञान छात्रों को देने के लिए जो पाठ्यक्रम निश्चित किया जाता है,उसे कार्यान्वित करने के लिए पाठ्यपुस्तक एक प्रमुख साधन है।

पाठ्यक्रम के मूल में जो उद्देश्य सन्निहित हैं,उनको साध्य करने के लिए पाठ्यपुस्तकों की नितांत आवश्यकता रहती है,उनका ज्ञान पाठ्यपुस्तकों के द्वारा ही अच्छी तरह से दिया जा सकता है। कम से कम भाषा विषय के लिए तो पाठ्यपुस्तकें अत्यंत जरूरी हैं। भाषा अनुकरण से आत्मसात् की जाती है। भाषा के लेखन,पढन,भाषण आदि विविध अंगों का यथायोग्य अध्ययन करने के लिए छात्रों के सामने एक मूर्त आधार की आवश्यकता होती है। इस आवश्यकता की पूर्ति पाठ्यपुस्तक द्वारा हो सकती है। भाषा का एक विशुद्ध आदर्श छात्रों के सामने रहे यही प्रमुखतया भाषा की पाठ्यपुस्तकों का हेतु रहता है,जिनके सहारे छात्र भाषा के विविध अंगों का ज्ञान आसानी से प्राप्त कर सकते हैं। इसके आलावा पाठ्यपुस्तकों के कारण शिक्षा में एक प्रकारसे एक सूत्रता भी आ जाती है।

वर्तमान शिक्षा-पद्धति में पाठ्यपुस्तक का महत्त्वपूर्ण स्थान है। शिक्षा का कोई भी ऐसा स्तर नहीं,जहाँ पाठ्यपुस्तक का प्रचलन न हो। कोई भी विषय ऐसा नहीं जिस में पाठ्यपुस्तक की आवश्यकता अनुभव न की जाती है। अध्यापक के मुख से दिया गया ज्ञान कितना ही महत्वपूर्ण क्यों न हो, परंतु उस की पूर्णता के लिए पाठ्यपुस्तक का सहारा अवश्य लिया जाता है।

पाठ्यपुस्तकों का महत्त्व निरंतर बढता जा रहा है। वस्तुत: पाठ्य-पुस्तक के शिक्षा के विकास एवं प्रसार की कुछ आवश्यकता ओं को तो पूरा करती

है। जिस के परिणाम स्वरूप उसका महत्त्व बढ रहा है। ये आवश्यकताएँ मुख्यत: इस प्रकार हैं --

१) शिक्षा को सुबोध बनाने में सहायक -

भाषा का ज्ञान देते समय विद्यार्थियों को बार-बार पढने और लिखने का अभ्यास करना पडता है। इस अभ्यास कार्य में उन्हें पाठ्यपुस्तकें अत्यधिक सहायता प्रदान करती हैं।

२) शिक्षा प्रसार में सहायक -

छात्रों की संख्या कक्षा में अधिक होती है। ऐसी स्थिति में अध्यापक को अनुशासन रखना कठिन हो जाता है। पाठ्यपुस्तक की सहायता से विद्यार्थियों का ध्यान केंद्रित रखने में सहायता मिलती है। इस की सहायता से अध्यापक ४०-५० विद्यार्थियों को एक साथ पढाने में सक्षम हो सकता है। मुद्रण-कला के विकास के कारण लाखों की संख्या में पुस्तकें छप जाती हैं। इस प्रकार पाठ्यपुस्तक शिक्षा प्रसार में सहायक सिद्ध हो रही है।

३) मार्गदर्शन --

एक निश्चित समय में निश्चित भाषा योग्यता प्राप्त करने में पाठ्यपुस्तक आवश्यक मार्गदर्शन का काम करती है। एक निश्चित आयु वर्ग का सामान्य बालक अपनी मानसिक शक्तियों के अनुसार किस शिक्षा स्तर पर कितनी भाषा योग्यता प्राप्त कर सकता है - इसका ज्ञान पाठ्यपुस्तक की सहायता से मिलता है।

४) कुशल शिक्षण में सहायक -

पाठ्यपुस्तक की सहायता से अध्यापक अपने शिक्षण को कुशलतापूर्वक आयोजित कर सकता है। पाठ्यपुस्तक उसे पहले से बता देती है कि उसे क्या पढाना है। उसी के अनुसार वह उपयोगी शिक्षण विधियों का चयन करता हुआ अपने शिक्षण को प्रभावशाली एवं सफल बना सकता है।

५) शिक्षण का सशक्त साधन -

रस्क (Rusk) ने कहा है -" आधुनिक पाठ्यपुस्तक एक उपकरणात्मक संपदा है, जिसका वर्तमान स्कूल-कक्षा में महत्त्वपूर्ण स्थान है। यदि इसका ठीक प्रयोग किया जाए यह सामूहिक रूप से एक अनुभवहीन अध्यापक की अपेक्षा अधिक आयोजन प्रस्तुत कर सकती है।" [९]

६) ज्ञान के स्थायीकरण में सहायक -

ज्ञान के स्थायीकरण के लिए उसे स्मरण रखने की आवश्यकता होती है और पाठ्यपुस्तक स्मरण रखने में सहायता प्रदान करती है।

७) स्वाध्याय विकास में सहायक -

भाषा का एक महत्त्वपूर्ण उद्देश्य विद्यार्थियों में स्वाध्याय की प्रवृत्ति को विकसित करना है। पाठ्यपुस्तक का अध्ययन स्वाध्याय के विकास की ओर पहला महत्त्वपूर्ण कदम है।

८) मौलिक चिंतन के लिए प्रेरक -

प्रत्येक पाठ के अंत में मौलिक चिंतन के लिए प्रेरित करने वाले प्रश्न होते हैं। इन प्रश्नों के द्वारा बच्चों में मौलिक चिंतन का धीरे-धीरे विकास होता है।

९) ज्ञान के साथ-साथ मनोरंजन का भी साधन --

शिक्षण में मनोरंजन का भी महत्त्वपूर्ण स्थान है। भाषा की पाठ्य-पुस्तक में संकलित कहानियाँ, एकांकी, सरल एवं सरस कविताएँ, हास्य एवं व्यंग्यात्मक लेख आदि, विद्यार्थियों का पर्याप्त मनोरंजन करते हैं।

१०) शिक्षा के विभिन्न तत्वों में संतुलन स्थापित रखने में सहायक -

भाषा शिक्षा के विभिन्न तत्व हैं, जैसे उच्चारण, अक्षर-विन्यास, व्याकरण, रचना-कार्य आदि। इन विभिन्न तत्वों में संतुलन स्थापित करने की आवश्यकता होती है। पाठ्यपुस्तक के निर्माण में उस संतुलन का भी ध्यान रखा जाता है।

११) मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं की पूर्ति में सहायक -

भाषा की पाठ्यपुस्तक तैयार करते समय संबंधित आयु-वर्ग की मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं को भी आधार बनाया जाता है। क्यों कि पाठ्यपुस्तक बच्चे की मानसिक रूचियों के अनुकूल होती है, इस लिए वह उस में रूचि भी लेने लगता है।

१२) सुलभ एवं मितव्ययी साधन -

पाठ्यपुस्तक एक ऐसा साधन है कि सभी विद्यार्थियों को थोडा खर्च करने पर आसानी से मिल जाती है। अत: पाठ्यपुस्तक शिक्षा का सुलभ और मितव्ययी साधन है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि पाठ्यपुस्तक शिक्षा प्राप्त करने का आवश्यक एवं महत्त्वपूर्ण साधन है। भाषा-शिक्षण में भाषा तथा शब्दावली का स्तर निश्चित करने, ज्ञान का स्तर निर्धारित करने, विद्यार्थियों को वाचन अभ्यास के ज्यादा से ज्यादा अवसर प्रदान करने तथा उन्हें स्वाध्याय तथा मौलिक चिंतन की प्रेरणा देने के लिए पाठ्यपुस्तक अत्यंत महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

हिन्दी पाठ्यपुस्तकों के प्रकार -

हिन्दी पाठ्यपुस्तकों को मुख्यत: निम्नलिखित दो भागों में बाँटा जा सकता है --

(अ) सूक्ष्म अध्ययन के लिए पाठयपुस्तक -

इस में पद्य और गद्य का समावेश होता है। यह मुख्यत: विद्यार्थियों के वाचन के लिए होता है। इस के माध्यम से विद्यार्थि भाषा के विभिन्न तत्वों, उच्चारण, अक्षर-विन्यास, शब्दावली, सूक्तियाँ, व्यावहारिक व्याकरण, रचना-कार्य, आदि का ज्ञान प्राप्त करते हैं।

(ब) सहायक पुस्तक -

इस का प्रयोग द्रुत-पाठ के लिए किया जाता है। इस पुस्तक के माध्यम से विद्यार्थियों को इस योग्य बनायाजाता है कि वे जल्दी-जल्दी पढकर भाव ग्रहण कर सकें।

इन के अतिरिक्त अन्य पुस्तकों को भी पाठ्यपुस्तकों के रूप में निर्धारित किया जाता है। जैसे —

अ) व्याकरण की पुस्तक।

ब) कहानी, नाटक, एकांकी, कविता की पाठ्यपुस्तक।

क) वर्कबुक।

(ई) पाठ्यपुस्तक निर्मिति प्रक्रिया --

किसी भी विषय की पाठ्यपुस्तक की निर्मिति करने के लिए उस विषय के अध्ययन मंडल का सहयोग रहता है । इस अध्ययन मंडल में कुल मिलाकर सात से नौ तक सदस्य रहते हैं । इन सदस्यों की नियुक्ति शिक्षा राज्य मंडल की ओर से की जाती है । अत: यह सभी सदस्य,विषय तज्ञ,अध्यापक,मनोवैज्ञानिक,संशोधक रहते हैं ।

पाठ्यचर्या के अनुसार पाठ्यक्रम तथा पाठ्यक्रम के अनुसार पाठ्यपुस्तक तैयार करते समय तज्ञ,अध्यापक,जिस कक्षा के लिए पाठ्यपुस्तक बनानी है,उसी कक्षा के छात्रों का उम्रगट,उनका पूर्वज्ञान,बौद्धिकता का विचार चिकित्सक दृष्टि से करते हैं । अध्ययन मंडल के सभी सदस्य अपने विषय का पाठ्यपुस्तक निर्दोष हो इस लिए प्रयत्नशील रहते है । पाठ्यचर्या,पाठ्यक्रम से विषयों के अध्ययन का नया दृष्टिकोण और विषयों के पाठय घटकों की व्याप्ति आदि घटकों का चिकित्सक विचार कर पाठ्यपुस्तक निर्मिति की जाती है ।

पाठ्यपुस्तक निर्मिति के लिए लेखन कौशलवाले लेखक,कुशल अध्यापक, विषय तज्ञ ऐसे दस-पंद्रह व्यक्तियों की सूची अध्ययन मंडल की ओर से सूचित की जाती है । इस सूची पर विचार विमर्श मंडल की कार्यकारी परिषद की सर्वसाधारण सभा में किया जाता है । इन दस-पंद्रह नामों में तीन-चार तज्ञ और कुशल लेखक तथा संपादकों को पाठ्यपुस्तक निर्मिति मंडल के सदस्य पद के लिए नियुक्ति की जाती है । प्रत्यक्ष लेखन कार्य इन अध्ययन मंडल के निर्देशन में किया जाता है । अत: पाठ्यपुस्तक की निर्मिति करते समय समाज में स्थित किसि भी जाति की उपेक्षा नहीं होनी चाहिए ।

अध्ययन मंडल के सदस्य,लेखक,संपादकों की समय-समय पर संयुक्त सभा बुलायी जाती है । प्रथम सर्वसाधारण सभा में लेखक तथा संपादक पाठों का विभाजन कर लेते हैं । तथा लेखन संपादन करने के लिए मंडल की ओर से सूचनाएँ

दी जाती है। लेखक तथा संपादकों की संयुक्त सभा होती है। इस संयुक्त सभा के समय हर पाठ का उद्देश्य,आशय,प्रतिपादन,भाषा शैली ,विषय दृष्टिकोण आदि घटकों पर सूक्ष्मता से विचार किया जाता है। पाठ का संपादन करने से पहले तीन-चार बार पुनर्लेखन किया जाता है। और सूक्ष्म संपादन कर के चक्रमुद्रण की सहायता से चाचणी प्रतियाँ तैयार की जाती हैं।

किसी भी भाषा की पाठ्यपुस्तक तैयार करते समय विभिन्न वाङ्.मय प्रकारों का प्रतिनिधित्व करने वाले लेखकों के पाठ,कविता,वाङ्.मय आदि का समावेश किया जाता है। पाठ्य पुस्तक का लेखन,संपादन ध्यान पूर्वक किया जाता है। फिर भी पाठ्यपुस्तक निर्दोष रहने के लिए विद्वानों के परिक्षण से गुजरना आवश्यक होता है। इसी लिए पाठ्यपुस्तक को अध्ययन मंडल ने तैयार की हुयी प्रत चक्रमुद्रित कर के विशेषज्ञ,तज्ञ,अध्यापक लोगों के पास भेजकर अभिप्राय मँगवाए जाते हैं। इस के उपरांत पाठ्यपुस्तक के पाठों का अध्यापन पाठशालाओं में कर के उसपर प्रत्यक्ष प्रतिक्रिया ली जाती है। अभिप्राय माँगते समय पाठ के साथ प्रश्नावली भेज दी जाती है,जिन में किसी के दबाव में न रहकर अभिप्राय पाने की गुंजाइश रहती है।

समीक्षकों द्वारा मिली टीका-टिप्पणी का रिपोर्ट अध्ययन मंडल के सम्मुख रखा जाता है। अत: अध्ययन मंडल प्राप्त सूचनाओं से आवश्यक परिवर्तन करता है।

पूर्व माध्यमिक स्तर पर पाठ्यपुस्तक के लिए राज्य सरकार की ओर से अधिकृत पारिभाषिक शब्दों का प्रयोग किया जाता है। विविध विषयों के पाठ्यपुस्तकों की पांडुलिपियों की समीक्षा कर के उसमें उचित सुधार के साथ अंतिम जानकारी को अध्ययन मंडल स्वीकृति देता है और मुद्रण लायक पांडुलिपि की प्रत,चित्र,आकृतियाँ आदि तैयार कर के संपादक के पास छपाई के लिए भेज दिये जाते हैं।

पाठ्यपुस्तक की पांडुलिपि तैयार करने की पूरी जिम्मेदारी अध्ययन मंडल की रहती है। पाठ्यपुस्तक की छपाई गोदाम की सामग्री,पाठ्यपुस्तकों का वितरण

आदि सभी कामकाज महाराष्ट्र राज्य में - १)महाराष्ट्र राज्य पाठ्यपुस्तक निर्मिति मंडल तथा २) पाठ्यचर्या संशोधन मंडल । इन दो संस्थाओं द्वारा किया जाता है,जिनकी स्थापना जनवरी २७,१९६७ में हुयी ।

पाठ्यपुस्तक में किसी भी प्रकार की त्रुटि न रह जाए इस ओर विशेष रूप से ध्यान दिया जाता है । फिर भी पाठ्यपुस्तक प्रकाशित होने के बाद त्रुटियों को मंडल सदस्यों के सामने प्रस्तुत कर के त्रुटि संबंध में चर्चा की जाती है । और अध्ययन मंडल पाठ्यपुस्तक में उचित परिवर्तन कर के पुनर्मुद्रित करता है । एकाद त्रुटि में तत्काल परिवर्तन करना हो तो उस संबंध में तत्काल पत्रक निकालकर पाठशाला में उक्त परिवर्तन की तत्काल सूचना दी जाती है । अत: पाठ्यपुस्तक निर्मिति एक अखण्ड चलने वाली प्रक्रिया है । यही विचार सामने रखकर पाठ्यपुस्तक अधिकाधिक निर्दोष कैसी रहेगी इस ओर हमेशा ध्यान दिया जाता है ।" [१०]

पाठ्यपुस्तक निर्मिति प्रक्रिया

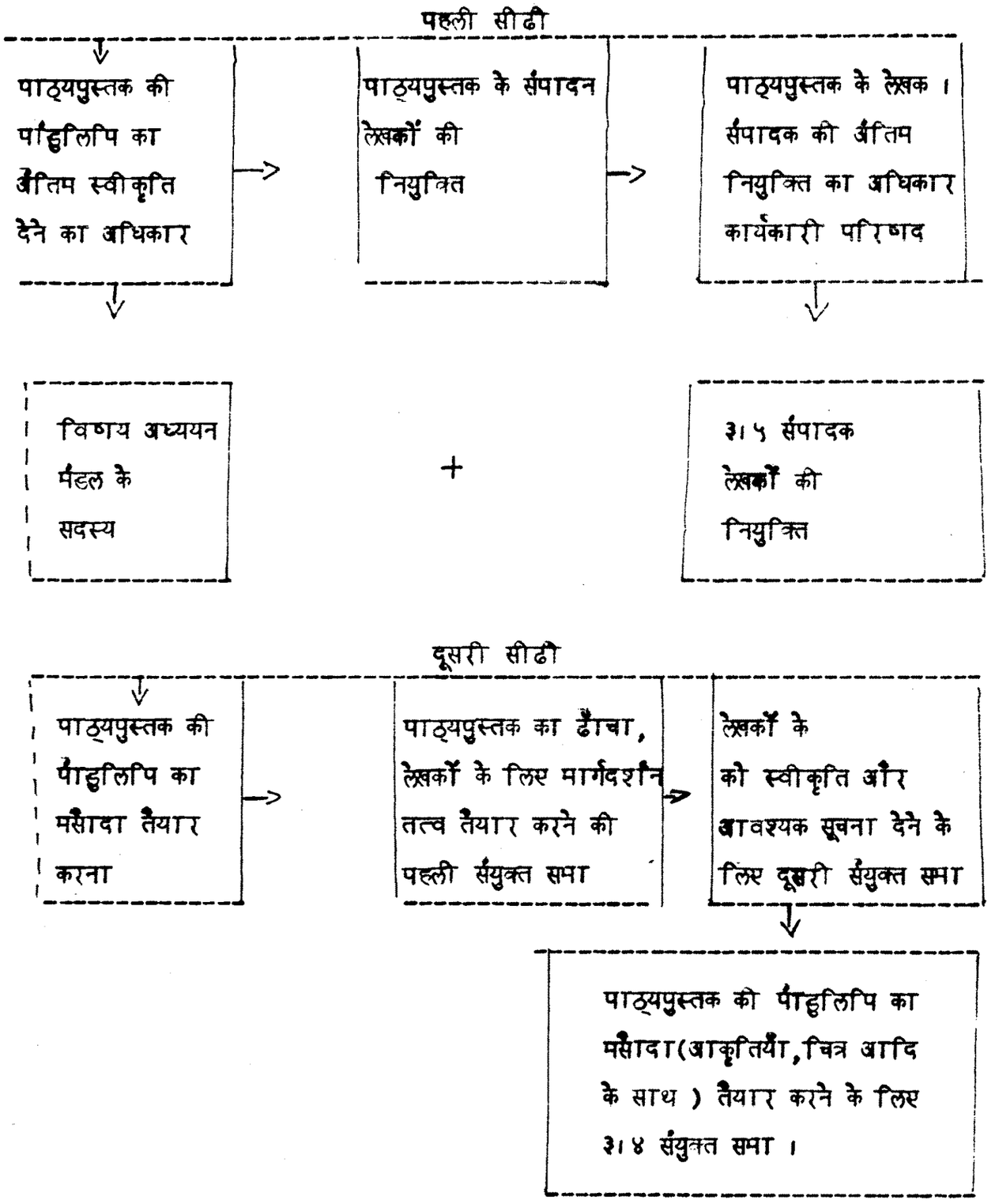

तीसरी सीढी

पाठ्यपुस्तक के मसौदे के बारे में टीका, समीक्षा

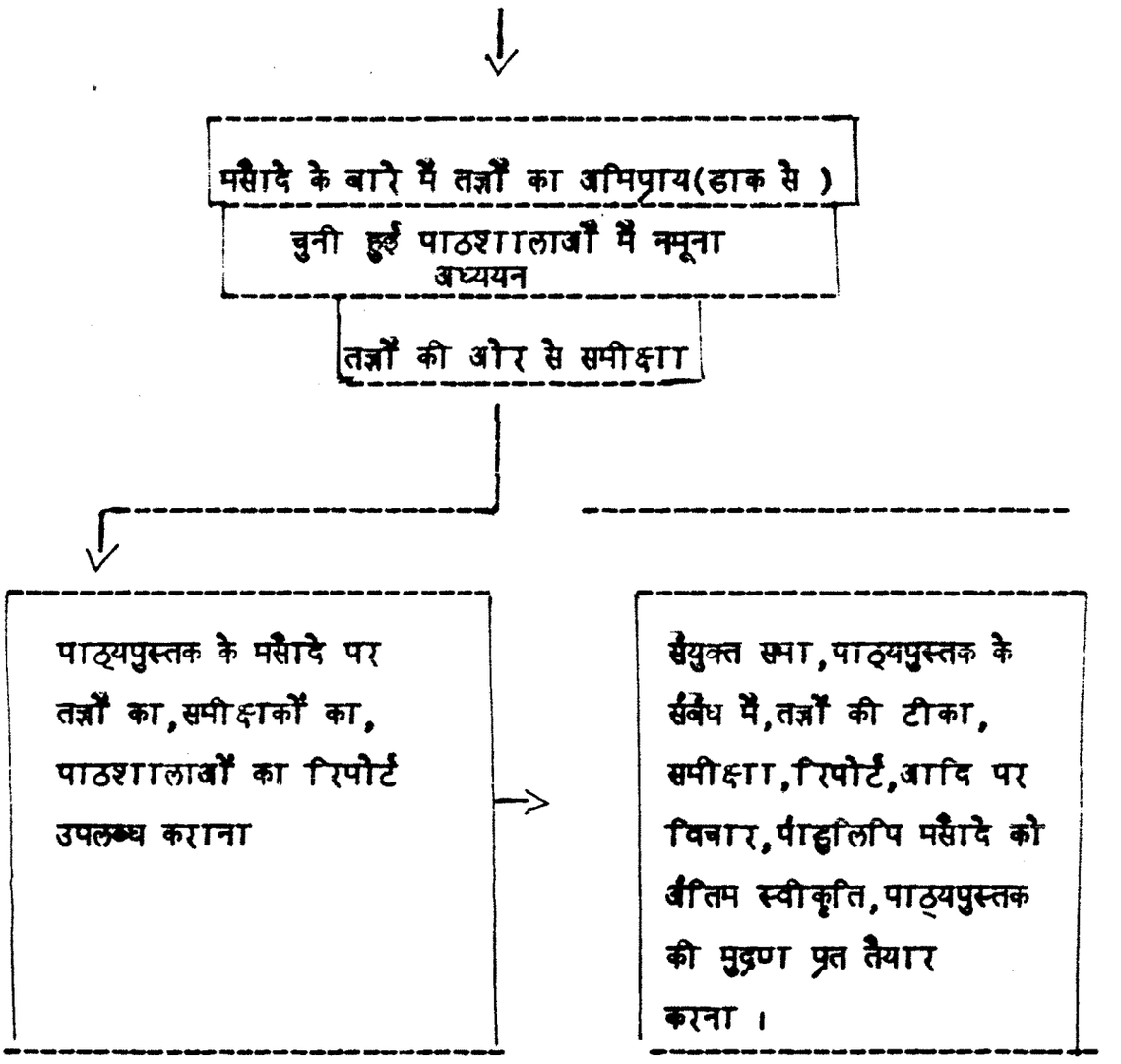

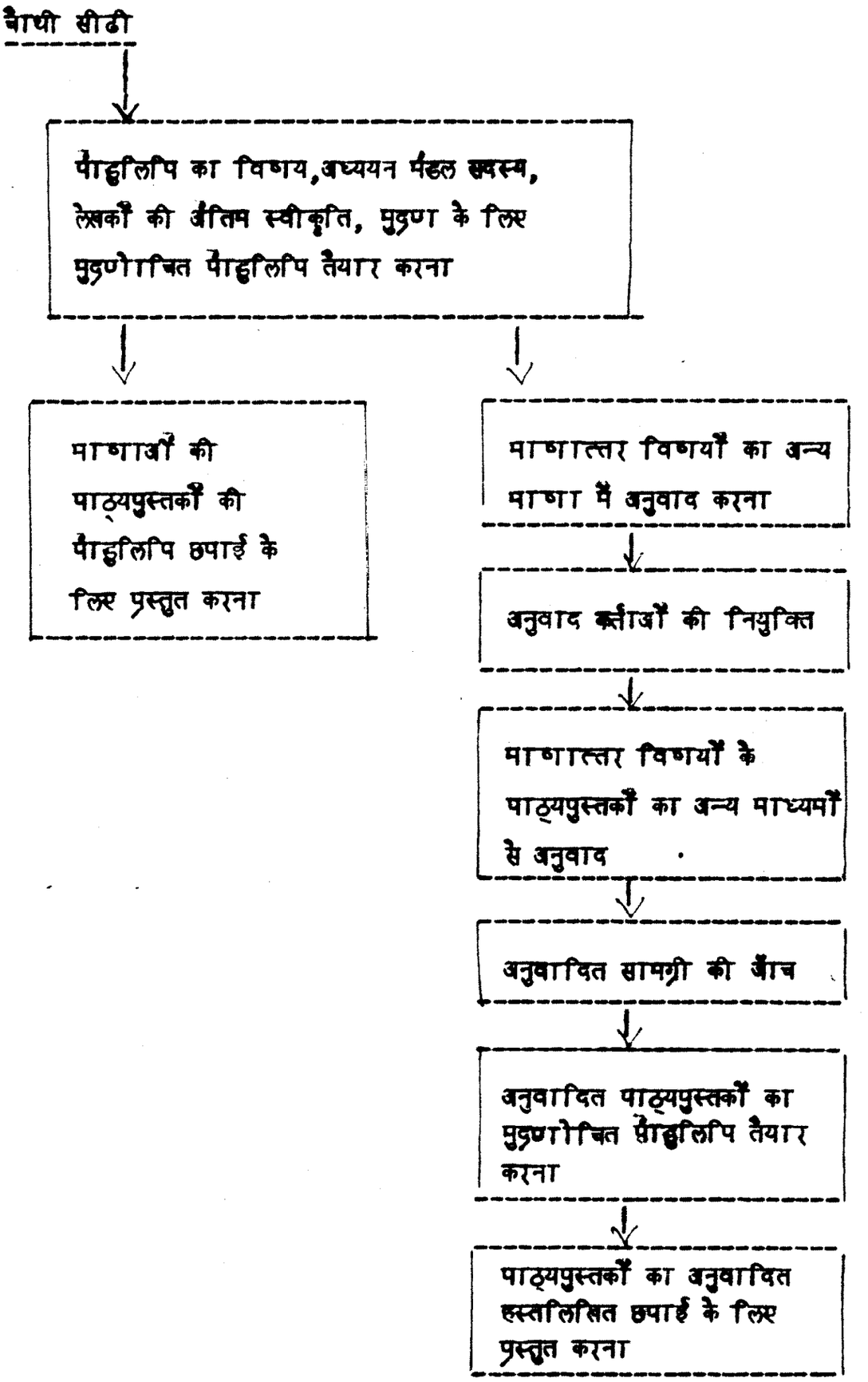
चौथी सीढी
पांडुलिपि का विषय,अध्ययन मंडल सदस्य, लेखकों की अंतिम स्वीकृति, मुद्रण के लिए मुद्रणोचित पांडुलिपि तैयार करना
भाषाओं की पाठ्यपुस्तकों की पांडुलिपि छपाई के लिए प्रस्तुत करना
भाषात्तर विषयों का अन्य भाषा में अनुवाद करना
अनुवाद कर्ताओं की नियुक्ति
भाषात्तर विषयों के पाठ्यपुस्तकों का अन्य माध्यमों से अनुवाद
अनुवादित सामग्री की जाँच
अनुवादित पाठ्यपुस्तकों का मुद्रणोचित पांडुलिपि तैयार करना
पाठ्यपुस्तकों का अनुवादित हस्तलिखित छपाई के लिए प्रस्तुत करना

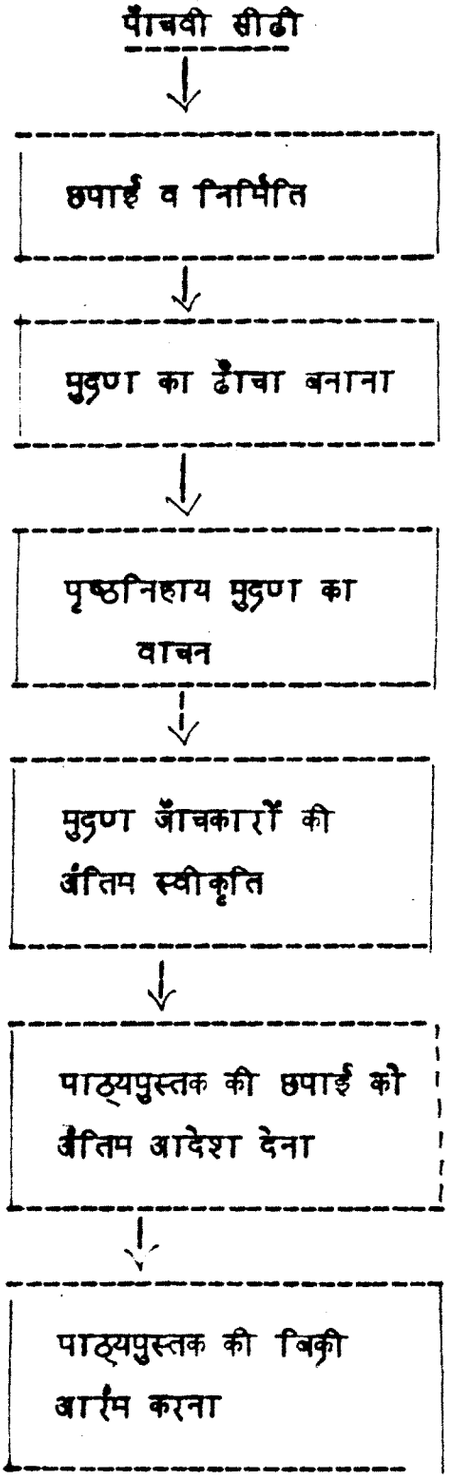

उपर्युक्त पूरी सारणी श्री श्री.र.बोकील द्वारा लिखित लेख से ली गई है, जो दिसंबर १९८७ की मासिक पत्रिका "शिक्षण संक्रमण" में प्रकाशित है।

पाठ्यपुस्तक निर्माण के प्रमुख सिद्धांत --

पाठ्यपुस्तक निर्माण के प्रमुख चार सिद्धांत है ।

१) चयन -

चयन प्रक्रिया का संबंध अध्ययन-अध्यापन के लिए पाठ्यपुस्तक में समाविष्ट की जानेवाली भाषिक एवं वैचारिक ,साहित्यिक सामग्री से है । इस सामग्री का चयन भाषा शिक्षण के उद्देश्यों और शिक्षण विधियों,अध्येता की मौलिक आवश्यकताओं,अभिरुचि तथा परिपक्वता उनके कक्षास्तर,बुद्धि-स्तर,मानसिकस्तर, सामाजिक परिवेश,उपलब्ध कालावधि और भाषा-अधिगम के लिए पर्याप्त शैक्षिक अनुभूतियों की व्याप्ति को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए ।

द्वितीय भाषा के रूप में हिन्दी का शिक्षण केवल भाषिक कौशलों के विकास के लिए ही नहीं अपितु छात्रों में राष्ट्रीय दृष्टि उत्पन्न करने और उन्हें शेष भारत के भावनात्मक और वैचारिक स्तर से जोडने हेतु होना चाहिए । पाठ्यपुस्तक में विभिन्न राज्यों के जीवन और वहाँ की सांस्कृतिक परंपरा,भारत की संस्कृति के विभिन्न आयाम भारत की आजादी और सुरक्षा के लिए देश के विभिन्न प्रदेशों के लोगों द्वारा दिए गए योगदान का महत्व,देश की प्राकृतिक संपदा और उनकी बराबर भागीदारी और देश की उन्नति के लिए सबका समान दायित्व आदि विषयों को स्थान दिया जाना चाहिए ।

भाषिक,साहित्यिक तथा वैचारिक सामग्री का चयन एवं परस्पर संबंध निम्नांकित चार भाषा कौशलों को ध्यान में रखते हुए किया जाना चाहिए ।

१)	सुनना	-	श्रवण-अभिज्ञान । पहचान ।
			श्रवण - आकलन ।
२)	बोलना	-	उच्चारण,मौखिक अभिव्यक्ति ।
३)	पढना	-	दृश्य - अभिज्ञान,वाचन-आकलन ।
४)	लिखना	-	लिपि संकेत,वर्तनी,रचना ।

२) क्रम निर्धारण --

भाषिक इकाइयों का वर्गीकरण छात्रों की उम्र, स्तर एवं प्रौढता को दृष्टि में रखते हुए किया जाना चाहिए। वर्गीकरण के बाद शिक्षण-सूत्रों के अनुसार आसान से कठिन की ओर, सरल से जटिल की ओर, प्रत्यक्ष से अप्रत्यक्ष की ओर इस सामग्री का अनुस्तरणाकिरण होना चाहिए।

साहित्यिक एवं वैचारिक सामग्री का वर्गीकरण शिक्षा के विभिन्न स्तरों के लिए निर्धारित उद्देश्यों, छात्रों की आवश्यकताओं, अभिरुचि एवं परिवेश, विषय की अपरिचितता, कठिनाई एवं सूक्ष्मता आदि को ध्यान में रखते हुए किया जाना चाहिए। इस वर्गीकृत सामग्री का भी अनुस्तरण किया जाना आवश्यक होता है।

३) प्रस्तुतीकरण --

प्रस्तुतीकरण में पूरी पाठ्यपुस्तक और प्रत्येक पाठ का प्रस्तुतीकरण सम्मिलित है।

१) पाठ्यपुस्तक पाठ्यक्रम, उसके उद्देश्य और उसका उपयोग करने वाले अध्यापक तथा अध्येता के अनुकूल होनी चाहिए।

२) निर्धारित शब्दावली एवं वाक्य संरचनाएँ विधिवत् नियंत्रित चाहिए।

३) प्रत्येक पाठ की भाषा सुस्पष्ट, स्वाभाविक, धारवाहिक एवं पाठ की प्रकृति या संदर्भ के अनुकूल होनी चाहिए।

४) भाषिक इकाइयों की पाठ-दर-पाठ आवृत्ति होनी चाहिए।

५) साहित्यिक, वैचारिक सामग्री छात्रों की दृष्टि से मनोरंजक एवं आकर्षक होनी चाहिए।

६) छात्रों के अनुकूल कहानी, वार्तालाप, संस्मरण, यात्रावर्णन, कविताएँ, काल्पनिक कथाएँ एवं चुटकुले आदि का पाठों में समावेश होना चाहिए।

७) कुछ पाठ नाट्यीकरण करने योग्य होने चाहिए।

४) आवृत्ति -

भाषा का पर्याप्त अभ्यास होने की दृष्टि से पाठों में आई नई शब्दावली एवं वाक्य संरचनाओं की विधिवत आवृत्ति की जानी चाहिए। पाठ्यपुस्तक में दो प्रकार के अभ्यास होने चाहिए। स्वाध्याय और परिक्षण अभ्यास। पाठ्यपुस्तक के अंत में परिशिष्ट के रूप में शब्द-कोश, भाषा-अभ्यास, व्याकरण के नियम और विभिन्न प्रकार की टिप्पणियाँ होनी चाहिए। इनसे छात्रों को पाठ समझने में सहायता मिलती है।

५) पाठ्यपुस्तक का बाह्यरंग --

पाठ्यपुस्तक के अंतरंग के साथ-साथ उसका बाह्यांग भी निर्दोष होना चाहिए। पाठ्यपुस्तक का आकार न अधिक बड़ा हो, न अधिक छोटा। कागज न बहुत पतला हो न ऐसा कि जिसकी चमक आँखोंपर पड़े। पाठ्यपुस्तक की छपाई शुद्ध। मानक होनी चाहिए। प्रारंभिक कक्षाओं में मोटे अक्षरों में छपाई हो और धीरे-धीरे उच्च कक्षाओं में अक्षर बारीक होते जाए। अभ्यास एवं स्वाध्याय के अक्षर मूल पाठ के अक्षर से भिन्न हों। शीर्षकों के लिए भी अलग टाइप के अक्षर हो। पाठ्यपुस्तकों की जिल्द मजबूत होनी चाहिए। आवरण आकर्षक होना चाहिए। पाठ्यपुस्तकों का मूल्य उचित होना चाहिए, जिससे कि छात्र उसे खरीद सके और अभिभावकों पर अधिक भार न पड़े।[११]

संदर्भ सूची

१ कुंडले म.बा.
शैक्षाणिक तत्वज्ञान
व शैक्षाणिक समाजशास्त्र
प्रकाशक - श्री विद्या प्रकाशन
पूना ३०
१२-५-१९७५ ।
पृ.क्र.२२० ।

२ - तत्रैव -
पृ.क्र.२२० ।

३ - तत्रैव -
पृ.क्र.२२१ ।

४ - तत्रैव -
पृ.क्र.२२१ ।

५ - तत्रैव -
पृ.क्र.२३६ ।

६ जायसवाल सीताराम
शिक्षा-शास्त्र
द्वादश संस्करण
१९६१
पृ.क्र.८५ ।

७ माटिया एम.एम.
नारंग सी.एल.
आधुनिक हिन्दी
शिक्षाण विधियाँ
प्रकाशक - प्रकाश ब्रदर्स,लुधियाना - १४१००८
प्रकाशन १९८७
पृ.क्र.१४४ ।

८ माटिया एम.एम.
नारंग सी.एल.
आधुनिक हिन्दी
शिक्षण विधियाँ
प्रकाशक - प्रकाश ब्रदर्स
लुधियाना - १४१००८
प्रकाशन १९८७
पृ.क्र.१४४ ।

९ - तत्रैव -
पृ.क्र.१५६ ।

१० बोकील श्री. र.
मासिक पत्रिका - शिक्षण संक्रमण
दिसंबर १९८७
पृ.क्र.८० ।

११ प्रा.पंडित ब.वि.
हिन्दी अध्यापन
प्रकाशक श्री गो.के.जोगळेकर
नूतन प्रकाशन
२२८१ सदाशिव पेठ
पुणे ४११ ०३०
पृ.क्र.१३३ ।